यति संध्या

(हिन्दी भाषा टीका सहित)

ग्रन्थ कर्ता:

राजपीपला निवासी

स्वामी शंकरानन्दगिरि

प्रकाशक :

राजपीपला निवासि काछीयजाति कुलभूषण

व्रजलाल द्वारकादास

सम्वत् १९९४] [शक १८५९

प्रति ७०००

॥ यति संध्या भाषाटीका सहिता ॥

कर्ता

स्वामी शंकरानन्द गिरि

*

प्रकाशकः

राजपीपळा निवासि काछीय जातिकुलभूषण

व्रजलाल द्वारकादास ॥

विक्रम संवत् १९९४ ॥

थी। किन्तु संन्यासियोंके उपयोगी होनेसे भिन्न छापी है। मेरे देहान्तके वाद यदि कोई वेदकी महिमाका प्रचार करनेवाला संन्यासी मिला तो सव पुस्तकोंका और मठका स्वामी वने, यदि नहीं मिला तो नारायण शर्मा, अध्यक्ष है। इसके पीछे जानी जमियतराम नवलराम, चिमनलाल नवलराम, त्र्यंबकलाल नर्मदाशंकर, चन्दुलाल जयकृष्ण मलावीया ये मेरे नामके शंकरानन्द पुस्तकालय (मठ)की व्यवस्था करें ॥

दशनाम संन्यासियोंसे विशेष प्रार्थना

प्रचण्डपाखण्डविखण्डनोद्यतं, त्रयीशिरोऽर्थं प्रतिपादने रतम् ॥ वुधैर्नुतं योगकलाभिरावृतं नमामि तं श्रीगुरुशंकरार्यम् ॥

राजा परिक्षतके पौत्र शतानीक तक वैदिक धर्म पूर्ण रहा, फिर चारवाक, पाशुपतमत तथा भक्तिमार्गी, हैरण्यगर्भ, सौर, शाक्त, वैष्णव पंथ चमकने लगे, फिर व्रात्य माथुरसंघ जैनमत प्रवर्तक महावीर स्वामी, और मगध व्रात्य संघ वुद्ध प्रगट हुआ। इनके मार्गमें द्विजगण गये। वे अपनी २ वेद शाखाओंको नाशकर जैन वुद्धमतमें घुस गये। दश आना प्रजा जैन बौद्ध हो गयी, चार आना पाशुपत, सौर, शाक्त, हैरण्यगर्भ वैष्णव होंगे, दो आना वैदिक धर्म रहा। भगवान् शंकराचार्यने सव मतोंका खण्डन करके वैदिक धर्ममें प्रजाको लगाया, और वदरीनारायणकी मूर्ति स्थापन कर वदरी धाम वनाया, द्वारका धाम वनाया, जगन्नाथ और रामेश्वरका धाम भी रक्खा। शंकराचार्यके जन्मके तीनसौ वर्ष पीछे नवीन वैष्णवमत निकला। फिर चार संप्रदायी वैष्णव हुए। इनमें भक्ति और द्वैतवाद है, वह यहूदी मतके पहिले आसुर

प्रजाका धर्म था। यह प्रजा मेसोपोटामियाँ आदि देशोंमें वास करती थी वही प्रजा यहूदि, फिर ईसाई, फिर मुसलमान हुई। इन नवीन वैष्णवोंके आचार विचार स्मार्त्त प्रजामें भी घुस गये हैं। और कितने वैदिक धर्मरहित नाम मात्रके अपनेको दशनामी बताते हुए, वाममार्गी, हिङ्गुलाज, टुमेरधारी हैं और वैष्णवमत पालते हैं। जैसे एक मच्छीके मरणसे सब तलावका जल दुर्गन्धी मारता है, तैसे ही गुसाँई वाम-मार्गियोंके आचरणसे सब वैदिक संन्यासियोंकी, नवीन मतवाले नापिकसे शिर मुडायकर भगवाँ वस्त्रधारी अपनेको वैदिक संन्यासी बता कर निन्दा करते हैं॥

वादी भद्रं न पश्यति॥

इस लिये निन्दारहित बनो॥ सन्यस्तके समय

ॐ भूः संन्यस्तं मया ॐ भूवः संन्यस्तं मया ॐ स्वः संन्यस्तं मया इति त्रिःकृत्वा॥

प्रजापत्यइष्टि (विरजाहवन)के अनन्तर इस मंत्रका तीनवार उच्चारण करनेसे संन्यासी होता है। दशनाम संन्यासी ही परंपरागत वैदिक संन्यास है। संन्यास धर्म, वेद—सिद्धान्त—रहस्यके दूसरे और तीसरे खण्डमें है। जैसे वन, आरण्य सामान्य विशेष वनका ही भेद है, तैसे ही साधन सिद्धिके द्वारा सिद्ध कोटीको प्राप्त करना ही वन और आरण्य संन्यासी है॥ वनने नित्य ऐतरेयोपनिषद्का स्वाध्याय करना और अरण्यने, नित्य कौषितकि उपनिषद्का पाठ करना ? ये दोनों गोवर्धन मठके हैं॥१॥ जैसे तीर्थोमें विधियुक्त स्नान, तप, तर्पणादिसे पवित्र

होते है, और ब्रह्मचर्य्य आश्रममें वास करनेसे सब आश्रमोंका अधिकारी होता हैं। तैसे ही प्रजापत्य-विरजा हवनात्मक दीक्षारूप तीर्थमें स्नान करके चतुर्थ संन्यास आश्रमका अधिकारी होता है। तीर्थनामा संन्यासीने नित्य केनोपनिषद्का स्वाध्याय करना, और आश्रमनामा मुनिने नित्य ताण्ड्यारण्य (छांदोग्योपनिषद्) का पाठ करना। ये दोनों शारदा मठके हैं ॥ २ ॥

गिरिर्वै रुद्रस्य योनिः ॥

कृष्णयजुः काठकशाखा ३६।१४ ॥

जैसे आनन्ददायक कैलास रुद्रका निवास स्थान है, व्यष्टि बुद्धिरूप हृदयमें और अधिदैव सूर्य्यमें जो चेतन जीव और भर्ग रूपसे विराजमान है, सो ही मैं निरुपाधिक शुद्ध तुरीय शिव हूँ। सो ही गिरि नामा परिव्राजक है उसने नित्य शौनकेयारण्यकके अन्तर्गत मुण्डकोपनिषद्का स्वाध्याय करना। जैसे पर्वत हरा सुखा होनें पर भी अचल है तैसे हि पर्वतनामा यति लाभ अलाभ होनेपर भी अचल रहै, उसने नित्य पिप्पलादिय आरण्यकके अन्तर्गत प्रश्नोपनिषद्का पाठ करना। जैसे समुद्रमर्य्यादामें रहता है, तैसे हि सागरनामा मुनि संन्यासधर्मकी मर्य्यादामें रहे, उसने माण्डूक्योपनिषद्का नित्य पाठ करना। ये तीनो ज्योतिर्मठके हैं ॥ ३ ॥ जैसे सरस्वती सब विद्याओंकी देवी है, तैसेही सम्पूर्ण विद्याओंसे युक्त होनेपर भी सरस्वती भिक्षुक नित्य बृहदारण्यकोपनिषद्का स्वाध्याय करे। जैसे भारती द्युलोककी देवी सबका जलसे पालन करती है, तैसे ही भारतीनामा यति मठके आचार्यपद पर

आरूढ होकर सब प्रजाको वैदिकधर्मोपदेश करके पालन करे। और तैत्तरीयोपनिषद्का पाठ करे। पुरीनामा संन्यासी ज्ञानकाण्डसे पूर्ण हुआ भी शिष्योंको कर्म उपासनाके सहित ज्ञानका उपदेश करता हुआ कठोपनिषद्का पाठ करे। ये तीनों शृङ्गेरी मठके हैं (४) सब दशनामी संन्यासीयोंको नित्य स्वाध्याय रूप श्वेताश्वेतरोपनिषद्का पाठ करना चाहिये क्योंकि परंपरागत शाखा प्रवर्तक श्वेताश्वेतर मुनिका और सब संन्यासियोंका सम्वादरूप अन्तिम उपदेश है। इस लिये पाठ करना चाहिये ॥

सर्वेषु वेदेष्वारण्यकमावर्तयेत्, उपनिषदमावर्तयेत् ॥

आरुणेयु० २ ॥

वेदोंके अन्तिम भाग ज्ञानकाण्डात्मक आरण्यकका नित्य पठन पाठन करना चाहिये, यही संन्यासियोंका मुख्य अध्ययन करनेका ग्रन्थ है। और भोजनके सयम सब संन्यासियोंको तत्पुरुष (तदेवाग्नि० माध्यन्दिनी शाखाके ३२ अध्याय)का पाठन करना, अथवा ईशोपनिषद्का। मैंने वेदोंसे यतिसंध्याका संग्रह किया है, इस लिये उपासक संन्यासियोंको नित्य संध्या करना चाहिये। और सबको प्रणवका जप करना चाहिये ॥

निवेदक

स्वामी शंकरानन्दगिरि

श्रेयस्सत्र (नाना मठ) राजपीपला

वाया अंकलेश्वर (गुजरात)

आश्विन सुद १५
सं. १९९४

यतिसंध्या हरद्वारके कुम्भपर दशनामी संन्यासियोंको उपहारमें दी जायगी। और कुम्भसे भिन्न समयमें चार आनेके टिकट भेजकर मंगावे। दशनामी संन्यासियोंसे भिन्न किसीको नहीं दी जायगी ॥

पुस्तक हिन्दी

चतुर्वेदीय रुद्र सूक्त	भा.	टी.	....	रु. २–४ ॥
वेद सिद्धांन्त रहस्य	भा.	टी.	....	रु. १॥ ॥
चतुर्वेदीय संध्या	भा.	टी.	....	छः आना ॥

लेखकके पतेसे मिलेगी ॥

परमहंस परिव्राजक स्वामीश्री शंकरानन्दगिरि–राजपीपला.

ॐ नमः शिवाय

॥ अथ यति संध्या प्रारम्भ ॥

स्नान करके अग्निहोत्रकी भस्म प्रणव मंत्रसे धारण करे और रुद्राक्षमाला भी धारण करे, फिर निम्न मंत्रोंको एकबार बोलकर तीन आचमन करे।

ॐ आर्द्रं ज्वलति ज्योतिरहमस्मि ॥ योऽहमस्मि ब्रह्माहमस्मि ॥ अहमस्मि ब्रह्माहमस्मि अहमेवाहं मां जुहोमि स्वाहा ॥१॥

तै० आरण्यक १०।१।२७ ॥

जो जलका स्वामी चेतन है, सो ही मैं हूँ, जो चराचरमें प्रकाशित है, सो ही व्यापकरूप मैं हूँ, जो मैं व्यष्टि उपाधिक हूँ सो ही मैं समष्टि स्वरूप हूँ, मैं व्यष्टि समष्टि हूं, मैं व्यष्टि समष्टि भेद रहित

तुरीय रुद्रस्वरूप हूँ। मैं अधिष्ठान महेश्वर ही हूँ। मैं अपने विवर्तरूप माया द्वैतको अद्वैतमें स्वाहारूपसे लय करता हूँ। फिर निम्न मंत्रसे संकल्प करे ॥

अहं मनुरभवमिति मंत्रस्य वामदेव ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः स्वात्मा देवता, संकल्पे विनियोगः ॥ अहं मनुरभवं सूर्यश्चाहं कक्षीवाँ ऋषिरस्मि विप्रः ॥ अहं कुत्समार्जुनेयन्यृञ्जेऽहं कविरुशना पश्यतामा ॥२॥

ऋग्० ४।२६।१ ॥

मैं वामदेव मनुप्रजापति हुआ। मैं सबका प्रेरक सविता हुआ। मैं सर्वज्ञ मंत्रदृष्टा कक्षीवान् ऋषि हुआ हूँ। मैंने ही अर्जुनीपुत्र कुत्सको उत्तम विधिसे सिद्ध बनाया। मैं ही उशना कवि हुआ। हे अज्ञानी मनुष्यो मेरेको सर्वव्यापक अद्वैतस्वरूपसे देखो।

ॐ तत्सदद्यब्रह्मणो द्वितीये परार्द्धे श्वेत वाराह कल्पे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्तैकदेशान्तर्गते पुण्यक्षेत्रे कलि प्रथम चरणे अमुकामुकेषु मास पक्ष तिथि वासरेषु मम अज्ञानक्षयद्वारा रुद्रस्वरूप प्राप्त्यर्थं लातव्यगोत्रोत्पन्नोऽमुकनामाऽहं प्रातः संध्योपासनं करिष्ये ॥

और सायंकालमें, सायंसंध्योपासनं करिष्ये ॥

लातव्यो गोत्रो ब्रह्मणः पुत्रः॥

गो० ब्रा० पू० १।२८ ॥

ब्रह्मा लातव्यः ॥

तां० ब्रा० ८।६।८ ॥

सूर्यमण्डलस्थित ॐ स्वरूपी रुद्र ही लातव्य गोत्रवाला है। ब्रह्माका नाम लातव्य है। इसलिये ही अध्यात्म उपाधिक ज्ञानी संन्यासी अधिदैव उपाधिक सूर्यमण्डल स्थित निरुपाधिक रुद्रस्वरूप है। सब व्यष्टि उपाधिक संन्यासियेंका समष्टि उपाधिक ब्रह्मा ही गोत्र है। क्योंकि ब्रह्मचारी सप्तऋषियेंके लोकमें, गृहस्थ—प्रजापतिके लोकमें, वानप्रस्थ तपलोकमें जाते हैं। और चतुर्थ ब्रह्माश्रमी ब्रह्माके सत्यलोकमें जाते हैं। इस लिये ही संन्यासियेंका लातव्य गोत्र है। फिर संन्यासी निम्न मंत्रसे प्राणायम छः बार करे ॥

ॐ कारस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दोऽग्निर्देवता शुक्लोवर्णः सर्वोंपासनारम्भे विनियोगः ॥ सप्त व्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषि गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपंक्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांस्यग्निवाय्वादित्य इन्द्र, बृहस्पति, प्रजापति (अथर्वा विराट) हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा) देवताः ॥ अनादिष्ट प्रायश्चित्ते प्राणायामे विनियोगः ॥ षडाक्षर गायत्र्या मंत्रस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्री छन्दः ॥ तुरीय रुद्रो देवता प्राणायामे विनियोगः ॥ शिरसः प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिपदा गायत्री छन्दो ब्रह्माग्निवायुसूर्यादेवताः ॥ यजुश्छन्दः प्राणायामे विनियोगः ॥ ॐ भूः ॐ भूवः ॐ सुवः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यं ॥ ॐ तद्ब्रह्म तदापः ॥ ॐ आपो ज्योतिरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम् ॥ ३ ॥

तै० आर० १०।२८।१ ॥

सात अग्नि जिह्वा, सातवायु. सात सूर्यकिरण, सातलोक, सात-प्राण, (सात चक्र और सात भूमिका) ही सात व्याहृतियें हैं । जो प्रणव प्रतिपाद्य है । सो ही चतुर्थ रुद्र है सो ही समष्टि व्यष्टिस्वरूपसे व्यापक है । जो तुरिय अविनाशी सब विश्वका आधार स्वरूप व्यापक चेतन रुद्र है, सो ही अग्नि अकार, वायु उकार, सूर्य मकार, इन तीनों नेत्रोंको धारण करता हुआ स्वयं शुद्ध तुरीय त्र्यम्बक है ॥

ब्रह्मवास्तोष्पति ॥

ऋग्० १०।६१।७ ॥

प्रणवरूप घरका स्वामी (ब्रह्म) रुद्र है । फिर निम्न मंत्रसे आचमन करे ॥

ॐ तद्ब्रह्म इति मंत्रस्य प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्री छन्दः प्रणवस्वरूपी रुद्रो देवता आचमने विनियोगः॥ ॐ तद्ब्रह्म (प्रथम आचमन), ॐ तद्वायुः (द्वितीय आचमन), ॐ तत्सत्यं (तृतीय आचमन), ॐ तत्सर्वं (हाथ धोना) ॐ तत्पुरोनमः (हृदयका स्पर्श करना) ॥४॥

तै० आर० १०।२९।१ ॥

निम्न मंत्रसे मार्जन करे ।

अन्नमय इति मंत्रस्य प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः । आत्मा देवता मार्जने विनियोगः ॥

अन्नमय प्राणमय मनोमय विज्ञानमयानन्दमया मे शुध्यन्तां ज्योतिरहं विरजा विपाप्मा भूयासं स्वाहा ॥५॥

तै० आर० १०।५७।१ ॥

मेरे पंचकोश शुद्ध होवें इस जलरूप आहुतिसे । मैं अविद्यादि पापसे रहित होऊँ । जो परब्रह्म है सो ही मैं हूँ । फिर निम्न मंत्रोका अघमर्षणके स्थानमें पाठ करे ॥

सहस्रशीर्षमित्यादि मंत्राणां नारायण ऋषिरनुष्टुप्छन्दांसि महेश्वर देवता अघमर्षणे विनियोगः ॥ सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशम्भुवम् । विश्वं नारायणं देवमक्षरं परमं प्रभुम् । अधोनिष्ट्या वितस्त्यान्तेनाभ्याम्रुपरितिष्ठति ॥ हृदयंतद्विजानियाद्विश्वस्याऽऽयतनंमहत् ॥ नीलतोयदमध्यस्था विद्युल्लेखेव भास्वरा ॥ नीवारशूकवत्तन्वी पीताभास्वत्यणूपमा ॥ तस्याः शिखायामध्ये परमात्मा व्यवस्थितः ॥ स ब्रह्मा स शिवः सेन्द्रः सोऽक्षरः परमः स्वराट् ॥६॥

तै० आर० १०।११।१-७-८-९ ॥

समष्टिदेव असंख्य व्यष्टि भेदसे अनन्त शिरआदि अवयववाला है, सम्पूर्ण सुखस्वरूप सबका मूल कारण है, आप, नारा ये द्यौके नाम हैं, उसी ही स्थानमें सूर्यमण्डल है, उस द्यौस्थितमण्डलमें अविनाशी उत्तम समर्थ व्यापक रुद्र देव है ॥

द्यौरेव विश्वमादित्यो नरः ॥

श० ब्रा० ९।३।१।३ ॥

द्युलोक ही विश्व (जल) है, और सूर्य ही नर है, सूर्यमण्डल नर द्यौरूप नाराओंमें स्थित है, इसलिये सूर्यनारायण है, इस नारायण योनिमें चेतन भर्ग ही लिंग है ॥

भूर्भुवः स्वरों महन्तमात्मानं प्रपद्ये ॥ हिरण्मयं तद्देवानाꣳ हृदयानि ॥ प्रचेतसे सहस्राक्षाय ब्रह्मणः पुत्राय नमः ॥ सहस्र बाहुर्गौपत्यः स पशूनभिरक्षतु ॥ मयि पुष्टिं पुष्टिपतिर्दधातु ॥ आकाशस्यैष आकाशो यदेतद्भाति मण्डलम् ॥

सामवेदीय मंत्र संहिता, ब्राह्मणं द्वितीयं प्रपाठकं, तृतीया कण्डिका ॥

तुरीय मात्रारूपके सहित अग्नि, वायु, सूर्य, ये चारों सब देवादि प्राणियोंके हृदय हैं। सूर्यवर्ती महाव्यापक ज्योतिस्वरूप रुद्रको मैं भरद्वाज अभेदरूपसे प्राप्त होता हूँ, और अनन्त, शिर, नेत्र, मुख, हाथ, पगवाला किरण समूह पालक, अतिज्ञान स्वरूप सूर्यमें विराजमान, ब्रह्माके पुत्र रुद्रको नमस्कार करता हूँ। वह रुद्र उपासकोंके पशुओंकी सर्वत्रसे रक्षा करे, तथा, मेरेमें ऐश्वर्य्यको, और ऐश्वर्य्यके स्वामीपनेको स्थापन करे, जो यह सूर्यनारायण प्रकाशित है, सो ही यह मण्डल, आकाशका भी आकाशरूप श्मशान है। इस श्मशानमें रुद्र स्थित है। कर्म उपासना ज्ञानरूप यज्ञकेद्वारा हम अभेदमय यजनके द्वारा स्वस्वरूपसे रुद्रको प्राप्त करें। कण्ठके नीचे और नाभिके ऊपर द्वादशाङ्गुल हृदय है, उसके बीचमें रुद्रको सबका महाआश्रय जानो ॥

मनोहृदये ॥

तै० आ० ३।१०।८।६ ॥

प्रत्येक प्राणियोंके हृदयमें चन्द्रमा मनरूपसे प्रविष्ट हुआ ॥

असौवा आदित्यो हृदयं । परिमण्डलं हृदयं ॥

श० ब्रा० ९।१।२।४० ॥

परिमण्डल हि योनिः ॥

श० ब्रा० ७।१।२।३७ ॥

यह आदित्य ही हृदय है, सर्वत्रव्यापक सूर्यमण्डल हृदय है । व्यापक सूर्यमण्डल ही योनि है । जैसे जलयुक्त काले मेघके मध्यमें बिजली है तैसे ही हृदयमें बुद्धिरूप अग्नि है, और द्यौमें सूर्यरूप अग्नि है, जैसे जलवाले निवार (चावल) की पीली पुच्छ है, तैसे ही देहके मध्य हृदयमें प्रकाशयुक्त निर्मल ज्योति है, वह ज्योति लौकिक सूक्ष्म पदार्थोंकी उपमा योग्य नहीं है । उस अध्यात्म ज्योति, और अधिदैव सूर्यज्योतिके मध्यमें परमात्मा स्थित है सो ही ब्रह्मा सो ही शिव, सो ही इन्द्र सो ही अविनाशी स्वयं प्रकाशी तुरीय महेश्वर है । निम्न मंत्रसे आचमन करे ॥

ॐ अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठे च समाश्रितः ॥ ईश सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातु विश्वभुक् ॥

तै० आर० १०।३८।१ ॥

हृदय स्थित बुद्धि अङ्गुष्ठमात्र है, उस उपाधिके आश्रयसे चेतन भी अङ्गुष्ठमात्र कहा जाता है, वह रुद्र पुरुष सब जगत् की सृष्टि आदि करनेमें समर्थ है, और सबका संहार करनेवाला इस आचमनसे प्रसन्न हो फिर प्रणवसेती अर्घ्य देना। फिर निम्नमंत्रोंसे उपस्थान करे ॥

दह्रं विपापमिति मंत्रस्य वसिष्ठ ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दो महेश्वरोदेवता रुद्र उपस्थाने विनियोगः ॥ योवेदादौस्वरिति मंत्रस्य वसिष्ठऋषिरनुष्टुप्छन्दो महेश्वरो देवता रुद्रोपस्थाने विनियोगः ॥ ॐ दह्रं विपापंवरवेश्मभूतंयत्पुण्डरीकं पुरमध्य संस्थम् ॥ तत्रापि दह्रे गगनं विशोकं तस्मिन्यदन्तस्तदुपासितव्यम् ॥ ७ ॥ योवेदादौस्वरः प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठितः ॥ तस्य प्रकृतिलीनस्य यः परः स महेश्वरः ॥ ८ ॥

तै० आर० १०।१।२३।२४ ॥

जो हृदयकमल अङ्गुष्ठमात्र अल्प है, एकाग्रचित्तके द्वारा ध्यान करनेसे पापरहित होता है वह हृदय उत्तम तुरीय रुद्रकी प्राप्तिका स्थान है। जो मुखादि अङ्गोंसे पूर्ण है, सो ही शरीररूपी पुर है, उस पुरके मध्यमें अल्प हृदयरूप आकाश है, उस आकाशमय श्मशानमें सब शोकरहित निर्मल तुरीय स्वरूप रुद्र है। उस व्यष्टि अध्यात्म हृदयके बीचमें जीव और अधिदेव सूर्यमण्डलके मध्यमें भर्ग है, तुरीय रूपसें उसको उपासना करना चाहिये। जो वेदके आदिमें ॐ कहा है, और जो वेदके अन्तिम भाग आरण्यकमें ॐ की महिमा प्रतिष्ठित है, अकार उकारमें, उकार मकारमें, मकार अर्धमात्रारूप: स्वभाविक अम्बिकामें लय करे, उस लीन हुए प्रणवके परे जो चतुर्थ मात्रारूप है सोही महेश्वर है॥

यद्वै चतुर्थं तत्तुरीयम्॥

श० ब्रा० ४।१।३।१४॥

जो चतुर्थ है, सो ही तुरीय है ॥

ईशानरिति मंत्रस्य अथर्वा ऋपिस्त्रिष्टुप्छन्दः॥ रुद्रो देवता रुद्रोपस्थाने विनियोगः ॥ ॐ ईशानः सर्वं विद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्माशिवो मे अस्तु सदाशिवोम्॥९॥

तै० आर० १०।४७।१॥

जो समस्त वेदादि शास्त्रोंका स्वामी, चराचर प्राणियोंका स्वामी, (ब्रह्म) सूर्यका स्वामी, हिरण्यगर्भका स्वामी रुद्र है, और सो ही ब्रह्म स्वरूप रुद्र मेरे लिये मोक्षरूप हो, सो ही ॐ व्यापी सदाशिव स्वरूप मैं हूँ ॥

अहं परस्तादिति मंत्रस्य भरद्वाज ऋपि ब्राह्मी गायत्री छन्दः स्वात्मा देवता॥ रुद्रोपस्थाने विनियोगः॥ अहं परस्तादहमवस्ताद्यदन्तरिक्षन्तदुमे पिताभूत्॥ अह२ सूर्यमुभयतो ददर्शाहं देवानां परमं गुहा यत् ॥१०॥

मा० शा० ८।९॥

मैं भरद्वाज सर्वत्रव्यापक हूँ, ऊपर द्यौ में सूर्य, और नीचे भूमिमें अग्नि, तथा मध्य अन्तरिक्षमें वायु मैं हूँ, सो ही सूर्यवर्ती पिता मेरा पालक है, अर्थात् इस भरद्वाज नामक देहका पालक है, जो एक प्राणिमात्रमें जीवरूपसे और सूर्यमें भर्गरूपसे व्यापक है, सो ही मै हूँ, जो किरणमय देवताओंका गुहारूप उत्तम स्थान मण्डल है

उस सूर्यस्थित रुद्रको मैं स्वस्वरूपसे देखता हूँ। फिर निम्न मंत्रसे सूर्यस्थित रुद्रका आवाहन करे ॥

देवानां चेति मंत्रस्य नारद ऋषिरनुष्टुप्छन्दो रुद्रो देवता, रुद्रमावाहने विनियोगः ॥ ॐ देवानाञ्च ऋषीणाञ्चासुराणाञ्च पूर्वजम् ॥ महादेव ँ सहस्राक्ष ँ शिवमावाहयाम्यहम् ॥ ११ ॥

मै० शा० २।९।१॥

देवताओंके पहिले और असुरोंके पहिले तथा ऋषिआदि प्राणिमात्रके प्रथम जो सूर्यमण्डलमें अन्तर्य्यामी रूपसे प्रगट हुआ है, उस अनन्त नेत्रवाले देवोंके देव शिवको मैं नारद अपने हृदयमें आवाहन करता हूँ। अर्थात् नारद देह अभिमानी चेतनको और सूर्य अन्तर्यामी रुद्रको अभेदस्वरूपसे मैं चिन्तवन् करता हूँ। यही रुद्रका आवाहन है ॥

इयं मे नाभिरिहमेसधस्थमिमेमे देवा अयमस्म सर्वः ॥ द्विजा अह प्रथमजा ऋतस्येदं धेनुरदुहज्जायमाना ॥

ऋग० १०।६१।१९॥

नाभानेदिष्ट राजपुत्रने कहा, द्युलोक ही मेरा उत्पत्ति स्थान है, अर्थात् सूर्यस्थित पुरुष ही नाभानेदिष्ट देहका अभिमानी जीव है, जो मैं जीव हूँ सोही सूर्यस्थ पुरुष हूँ, इस मण्डलमें भर्गरूपसे विराजता हूँ। ये सब देवता मेरे स्वरूप हैं जो सूर्यस्थित यह सर्व स्वरूप आत्मा है सो ही मैं नाभानेदिष्ट हूँ। द्यौभूमिरूप अण्डके मध्यसे सत्य स्वरूप ब्रह्माका पुत्र सूर्यात्मक पक्षी सबके पहिले उत्पन्न हुआ है, सूर्यरूपी

कूर्मदेह ब्रह्मासे उत्पन्न हुई है, और उस सूर्यमण्डल क्षेत्रकी उपाधिसे उत्पत्ति नाश रहित चेतनघनरुद्र ब्रह्माका पिता होनेपर भी क्षेत्रज्ञ रूपसे ब्रह्माका पुत्र है, इस सूर्यस्थित रुद्रसे मन वाणीरूप वृषभधेनु प्रगट होकर वृषभ मनुके द्वारा शतरूपा गौने इस सब जगत्‌को उत्पन्न किया॥

अत्रेदुमेमन्ससे सत्यमुक्तं द्विपाच्चयच्चतुष्पात्संसृजानि ॥

ऋग० १०।२७।१०॥

मैं इन्द्र इस देव शरीरमें जो कुछ कहता हूँ, वह सब निश्चय सत्य जानो, और दो चरणवाले देवादि प्राणि मात्र, और चार पगवाले पशु मात्रको मैं इन्द्रही उत्पन्न, पालन, संहार करता हूं ॥

सहोवाच, प्राणोऽस्मि प्रज्ञात्मा तं मामायुरमृतमित्युपास्व ॥

कौ० आर० ६।२॥

इन्द्रने कहा, हे प्रतर्दन, मैं प्रज्ञात्मा प्राण हूं, तू मेरेको अविनाशी आयुवाला, अर्थात् अनादि अखण्ड स्वरूप जानकर मेरी उपासना कर॥

अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुतमानुषेभिः ॥ यं कामयेतं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ॥

ऋग० १०।१२५।५॥

अम्भृण ऋषिकी पुत्री वाक् नामवालीने कहा, देव, दैत्य, पितर, और मनुष्य जिस ब्रह्माकी शरणमें जाते हैं, उस विधाताको मैं रुद्र-रूपसे वेदोंका उपदेश करती हूं, जैसी उपासककी भावना होती है उस भावनाके अनुसार ही मैं उपासकको श्रेष्ठवली, मंत्रद्रष्टा ऋषि, उत्तम

बुद्धिमान् ज्ञानी बनाती हूं, और उस अभेद ज्ञानीको ब्रह्माके स्वरूपकी प्राप्ति कराती हूं। जैसे माता शब्द सामान्य है, सामान्यसे स्त्रीपुत्री आदि भी माता हैं, किन्तु विशेषसे पुत्रकी ही माता है, तैसेही स्वस्वरूपके साक्षात्कार करनेवाले, वामदेव, वसुक्र, नाभानेदिष्ट, अम्भृणी, इन्द्र, अङ्गिरा, भरद्वाज, दधीच, कृष्णादि ज्ञानी भी सामान्य ईश्वर हैं, यदि इनको विशेष माने तो अनन्त परमेश्वर होनेपर, एक परमेश्वरका खण्डन हुआ, जैसे शिष्य अपने २ गुरुको परब्रह्म मानता है, तैसे ही विशेष उपकार करनेसे उत्तम ज्ञानियोंको लोक ईश्वर मानते हैं, इस लिये ही वे सब ज्ञानी सामान्य ईश्वर है, विशेष ईश्वर महेश्वर है, सो महेश्वर ही समष्टि, कारण, क्रिया, कार्य भेदसे, अन्तर्य्यामी, ब्रह्मा, प्रजापति है। और व्यष्टि, कारण देह, क्रिया सूक्ष्मदेह, कार्य स्थूलदेह भेदसे, प्राज्ञ, तैजस, विश्व है, इस लिये सब ही देहधारी ज्ञानी जीव कोटीमें है, जब अभेद रूपसे ज्ञानी महेश्वरमें लीन हुआ कि शिव हुआ ॥

तदपश्यत्तदभवत्तदासीत् ॥

मा० शा० ३२।१२ ॥

व्यष्टि उपाधिक जीव उस महेश्वरको स्वस्वरूपसे देखता है, सो ही स्वरूप होता है, सो ही प्रथम था; यह अति महावाक्य है। जो द्विजाति मात्र समष्टि उपाधिकोंके सहित तुरीय महेश्वरको त्याग कर, उनके स्थानमें मरणके अनन्तर व्यष्टि मनुष्य देहधारी ज्ञानियोंको परमेश्वररूपसे मानते और पूजते हैं, सब वैदिक प्रजामें अवैदिक अनार्य्य हैं ॥

अग्नौ क्रियावतां देवो दिवि देवोमनीषिणां ॥ प्रतिमा स्वल्पबुद्धिनां योगीनां हृदये हरः ॥

ऋगविधान ॥ १८२ ॥

कर्मकाण्डियोंका अग्निमें आहुति देना ही देवपूजन है, उपासकोंके हृदयमें रुद्र विराजमान है, वे मनको जोडकर हृदयमें रुद्रका ध्यान करते हैं, ज्ञानी संन्यासियोंका द्यौस्थित सूर्यमण्डलमें रुद्र है, इस रुद्ररूप इन्द्रके द्वारा ज्ञानी, तपलोकस्थित प्रजापतिको प्राप्त होता है, फिर अथर्वाके द्वारा सत्यलोक निवासी ब्रह्माको प्राप्त होता है। दोपरार्द्धके पीछे संन्यासीका ब्रह्ममें अभेदरूपसे मोक्ष होता है, और कर्म, उपासना, ज्ञानसे रहित साधारण मनुष्योंको अग्नि, वायु, सूर्य, ब्रह्मा, शिव, इन्द्र, विष्णु आदिकी प्रतिमा ही देव है ॥

ये यज्ञेषु प्रोक्तव्यास्तेषां दैवत उच्यते ॥

सामवेदीय देवताऽध्याय ब्राह्मणं १।२ ॥

जिन देवताओंकी वैदिक सोमादि यज्ञोंमें आहुति विधान की जाती हैं उनका नाम ही देवता है। मरे हुए श्रेष्ठ पुरुषोंका नाम देवता नहीं है, क्योंकि उनका दहन श्राद्ध आदि संस्कार हुए हैं, इसलिये उनकी अन्नादि प्रसादी श्राद्ध भोजनके समान है, द्विजाति मात्रने नहीं खाना। पंचप्राणाहुति ही, ब्राह्मणादिकी देव प्रसादी है ॥

पंचवैंब्राह्मणस्य देवता अग्निः सोमः सविता बृहस्पतिः सरस्वती ॥

मै० शा० ४।५।८ ॥

अग्नि, सोम, सविता, बृहस्पति, सरस्वती ये पंचदेव, ब्राह्मणादि द्विजाति मात्रके हैं ॥

रुद्रो वा अग्निः ॥ कपिष्ठशा० ४०।५ ॥ यो वै विष्णुः सोमः सः ॥ श० ब्रा० ३।३।४।२१ ॥ असावादित्योदेवः सविता ॥ श० ब्रा० ६।३।१।१८ ॥ बृहस्पते ब्रह्मस्पते ॥ तैं० ब्रा० ३।११।४।२ ॥ योषावै सरस्वती ॥ श० ब्रा० २।५।१।११ ॥ योषाहिवाक् श० ब्रा० १।४।४।४ ॥ वागिति स्त्री ॥ जै० आर० ४।२।२।११ ॥ अम्बी वै स्त्री भगनाम्नोः ॥ तस्मात् त्र्यम्बका ॥ मै० शा० १।१०।२० ॥ काठक शाखा ३६।१४ ॥

अग्नि नाम रुद्रका है जो विष्णु है सो ही सोम है । यह सूर्य ही सविता देव है । हे बृहस्पते तू ही गगपति हैं । स्त्री ही सरस्वती है । अम्बीनामवाली स्त्री ही सर्व ऐश्वर्य्यसम्पन्न है, स्त्री और अम्बी मिलकर, त्र्यम्बका हुआ, सकार लोप हुआ, इसलिये ही त्र्यम्बका, देवी हुई । रुद्रका ज्योतिस्वरूप लिंग । विष्णुका शालिग्राम । सूर्यका शुद्धस्फटिक । प्रणवरूप गणेशकी प्रतीमा । त्रिकोण देवीका यंत्र या प्रतीमा ये पाँच देव पौराणिक विधिसे सबके पूजने योग्य हैं, और वैदिक विधिसे हवन्के द्वारा द्विजाति मात्रके पूज्य हैं ॥ ११ ॥ फिर निम्नमन्त्रको पढकर, प्रगवका यथाशक्ति पाँच हजार, दश हजार, बारह हजार, जप करे ॥

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म ॥ अग्निर्दैवता ब्रह्मइत्यार्षं ॥ गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपं ॥ सायुज्यं विनियोगः ॥१२॥

तै० आर० १०।३४।१ ॥

इस ॐरूप एकाक्षर ब्रह्मका अग्नि (रुद्र) देवता है, ब्रह्माऋषि है, गायत्री छन्द परमात्मा स्वरूप है, सायुज्य (मोक्षके) लिये जप करता हूँ ॥ १२ ॥ जपके अनन्तर प्राणायाम करे, फिर आचमन करे। फिर निम्न मन्त्रसे जप सूर्यस्थ पुरुषमें अर्पण करे फिर अपनेको सूर्य-स्थ पुरुष माने ॥

हिरण्यमयेनेति मंत्रस्य दधीचऋषिः ॥ उष्णिक् छन्दो महापुरुष रुद्रो देवता ॥ अभेदचिन्तने विनियोगः ॥ हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम् ॥ योसावादित्ये पुरुषः सोसा-वहम् ॥ १३ ॥

मा० शा० ४०।१७ ॥

सूर्यमण्डलमय पात्रसे सत्यका स्वरूप ढका है, जो यह आदि-त्यमण्डलमें पुरुष है, सो ही वह मैं हूँ ॥

इतिश्री गुर्जर देशान्तर्गते, राजपीपलासंस्थाननिवासि स्वामी शंकरानन्दगिरि कृतायां यतिसंध्याभाषाटीकायां समाप्ता ॥
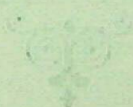
विक्रय्य पुस्तकें

१ **चतुर्वेदीय रुद्रसूक्तः**—(हिंदी भाषाटीका सहित) इस ग्रंथमें शिव क्या अपूर्व वस्तु है उस विषयका विवरण किया गया है और शिव (रुद्र) ही सर्वोपरि प्राप्य वस्तु है ऐसा सिद्ध किया गया है। मूल्य रु. २—४—० पोष्टेज अलग।

२ **वेद सिद्धान्त रहस्य**—(हिंदी भाषाटीका सहित) इस ग्रंथमें शिवका महात्म्य, कल्पसृष्टि, कल्पप्रलय और महाप्रलय स्वरूप, प्रजापति और सरस्वतीके समागमका विस्तार पूर्वक जानने योग्य निर्णय, अनेक देवोंका तात्पर्य, एक ही परब्रह्म, पुरुषसूक्तका और देवताओंके स्वरूपोंका यथार्थ निर्णय, अनादि कालकी चार वर्णाश्रमोंकी उत्पत्ति, आर्योंका मूलनिवास, ऋषि, ऋषिपत्नी, और ऋषिपुत्रियोंका मंत्रद्रष्टृत्व, यवही एक आदि अन्न, अग्निहोत्रका वर्णन, चार आश्रमोंका धर्म और मोक्षका वर्णन, ब्रह्म, अप्, और ऐसे दूसरे शब्दोंका अनेकार्थका वर्णन, वेदोंमें रहा हुआ अद्वैतवादका सिद्धान्त, ब्रह्मा और विष्णुका श्रुतिस्मृतिसिद्ध रहस्य, विष्णुकी नाभिसे ब्रह्माकी उत्पत्तिका तात्पर्य और श्रुतिके साथ स्मृतिओंके सिद्धान्तपूर्वक अनेक मननीय विषयोंका समावेश किया गया है। मूल्य रु. १—८—० पोष्टेज अलग.

३ **चतुर्वेदीयत्रिकालसन्ध्याः**—(हिंदी भाषाटीका सहिता) इस ग्रंथमें चारों वेदोंकी संध्या दी गई है और साथमें संध्यामें उपास्य देवका मननीय विषयरूप परिशिष्ट दिया गया है और तथा नित्य द्विजातिओंके पठन करनेयोग्य प्रातःसूक्त, अग्निसूक्त तथा इन्द्रसूक्त भी दिया गया है। इसका परिशिष्ट अवश्य पढने योग्य है। मूल्य रु. ०-६-०

इसकी दूसरी आवृति थोडे दिनमें छपेगी। ८ आनेका स्टेम्प भेजनेसे पुस्तक पोष्टमार्फत भेजी जायगी १० और जादा प्रति मगाने पर १० टका कमीशन दिया जायगा।

पुस्तक मिलनेका पत्ता—**स्वामी शंकरानंदगिरि.**
श्रेयःसत्र—राजपीपला, वाया अंकलेश्वर (गुजरात).